विक्रम संवत-२०३५, श्रावण शुक्ल - ६, शनिवार, तारीख १६-८-१९८०
वचनामृत-१७१, १७४, १८३, १८५ प्रवचन-९

एक म्यान में दो तलवारें नहीं समा सकतीं। चैतन्य की महिमा और संसार की महिमा दो एकसाथ नहीं रह सकतीं। कुछ जीव मात्र क्षणिक वैराग्य करते हैं कि संसार अशरण है, अनित्य है, उन्हें चैतन्य की समीपता नहीं होती। परन्तु चैतन्य की महिमापूर्वक जिसे विभावों की महिमा छूट जाये, चैतन्य की कोई अपूर्वता लगने से संसार की महिमा छूट जाये, वह चैतन्य के समीप आता है। चैतन्य तो कोई अपूर्व वस्तु है; उसकी पहिचान करनी चाहिए, महिमा करनी चाहिए॥१७१॥

किसी की चिट्ठी है, ९१, ९२ पढ़ना। १७१। **एक म्यान में दो तलवारें नहीं समा सकतीं।** क्या कहते हैं? एक म्यान में दो तलवारें नहीं समा सकती। वैसे **चैतन्य की महिमा...** वस्तु यह है। अन्दर भगवान आनन्द अतीन्द्रिय आनन्द, पूर्ण शान्ति का सागर, उसके स्पर्श से अनन्त-अनन्त शान्ति हो, ऐसा प्रभु। **चैतन्य की महिमा और संसार की महिमा दो एकसाथ नहीं रह सकतीं।** अन्तर आनन्दस्वरूप प्रभु उसकी महिमा और रागादि विकल्प की महिमा एकसाथ नहीं रह सकती। जिसको राग की महिमा है, उसको चैतन्य की महिमा नहीं है। जिसको राग का कर्तृत्व है, उसको चैतन्य की महिमा नहीं है। आहाहा! भेदज्ञान है। **चैतन्य की महिमा और संसार की महिमा दो एकसाथ नहीं रह सकतीं।** आहा..! अन्तर में अतीन्द्रिय आनन्द और अतीन्द्रिय शान्त, शान्त, चारित्र अर्थात् शान्त अकषायस्वभाव से भरा शान्त (स्वभाव)। करना-बरना कुछ नहीं, अन्दर जम जाना। ऐसा जो चारित्र है, उसकी महिमा है। वह महिमा और संसार की महिमा एकसाथ नहीं रह सकती।

कुछ जीव मात्र क्षणिक वैराग्य करते हैं... कोई क्षणिक वैराग्य करता है, बाहर से। क्षणिक क्यों कहा? त्रिकाल ज्ञायक के अनुभव बिना पुण्य और पाप का वैराग्य नहीं होता। पुण्य और पाप अधिकार में भगवान अमृतचंद्राचार्य कहते हैं, जिसको पुण्य—शुभभाव की

रुचि है, उसको आत्मा की रुचि है नहीं। जिसको शुभभाव—कर्तृत्व की बुद्धि है, उसको आत्मा की रुचि है नहीं। इसलिए कहते हैं कि दो महिमा एकसाथ नहीं (रह सकती)। **कुछ जीव मात्र क्षणिक वैराग्य...** बाहर से एक साधारण वैराग्य धारण करके कुटुम्ब छोड़े, स्त्री छोडे, कपड़े छोड़े, नग्न मुनि हो जाए। अनन्त बार हुआ है। उसमें कोई नयी चीज़ नहीं है। पंच महाव्रत धारण करे। वह कोई नयी चीज़ नहीं। वह तो अनादि अज्ञानी अभव्य भी करता है और अनन्त बार नौवीं ग्रैवेयक गया। ये अन्तर की महिमा... सूक्ष्म बात है, भाई!

विकल्प से बाहर से हटकर अन्दर में जाना, ऐसी चैतन्य की महिमा के समक्ष संसार की महिमा रह सकती नहीं। शुभराग की महिमा भी नहीं रह सकती। चैतन्य की महिमा के समक्ष शुभ तीर्थंकर गोत्र बाँधने का भाव है, उसकी भी महिमा रहती नहीं। आहाहा! ऐसी चैतन्य की महिमा है। वह तो क्षणिक वैराग्य करता है। आत्मा नित्यानन्द प्रभु की महिमा आये बिना बाह्य चीज़ की महिमा छूटती नहीं।

संसार अशरण है, अनित्य है, उन्हें चैतन्य की समीपता नहीं होती। अज्ञानी अनादि से ऐसा मानता है कि संसार अशरण है, अनित्य है। परन्तु सामने शरण और नित्य चीज़ देखी नहीं। नित्यानन्द प्रभु आनन्द का घन है, उसके सामने देखा नहीं। आहाहा! बात तो बहुत सादी है। काम बहुत ऊँचा-बड़ा है। अनन्त काल में जैन सम्प्रदाय में अनन्त बार आया, अनन्त बार क्रियाकाण्ड भी की। ऐसी क्रिया कि चमड़ी निकालकर नमक छिड़के तो भी क्रोध न करे। वह कोई क्रिया नहीं है। अन्तर चैतन्य आनन्द की महिमा आये बिना दूसरे की महिमा छूटेगी नहीं। आहाहा! यह बात करते हैं।

संसार अशरण है, अनित्य है,... ऐसा अज्ञानी मानता है। परन्तु नित्य और शरण के सामने देखता नहीं। **उन्हें चैतन्य की समीपता नहीं होती।** संसार अशरण, अनित्य है (ऐसा वैराग्य करता है), परन्तु अन्दर चैतन्य के सामने देखता नहीं। अन्दर भगवान अतीन्द्रिय आनन्द, पूर्ण शान्ति... उपशमरस वरसे रे प्रभु तारा नयनमां, ऐसा प्रभु को कहता है, परन्तु अपने में है। ऐसा कहते हैं। उपशमरस वरसे रे प्रभु तारा चैतन्यमां। चैतन्य में उपशमरस (बरसता है)। आहाहा!

मुमुक्षु :- शान्ति का रस चेतन में भरा है।

पूज्य गुरुदेवश्री :- पूर्ण भरा है। लबालब। अरूपी है, क्षेत्र थोड़ा है, इसलिए

उसको महिमा आती नहीं। अरूपी है, क्षेत्र छोटा है, शरीरप्रमाण और अनादि का अभ्यास या तो अशुभ का है, अथवा तो उसे छोड़कर शुभ का है। शुभ का अभ्यास भी अनादि से है। आहाहा! उसके समक्ष चैतन्य की शान्ति, शान्ति, शान्ति, शान्ति.. शान्ति पर नजर जाती नहीं। चैतन्य की समीपता नहीं होती। राग के रस के प्रेम में... स्थूल राग की बात नहीं है। सूक्ष्म राग। सूक्ष्म राग में, अरे..! गुण-गुणी का भेदरूप विकल्प है, उसके भी प्रेम रुक गया, उसको चैतन्य की समीपता नहीं होती। आहाहा!

जिसको **चैतन्य की महिमा...** आहा..! **जिसे विभावों की महिमा छूट जाए,...** अतीन्द्रिय आनन्द और शान्ति, उसका एक अंश भी सम्यग्दर्शन होने पर उसका एक नमूना, नमूना कहते हैं? सम्यग्दर्शन में शान्तरस का गंज है। अतीन्द्रिय आनन्द का पिण्ड है, तो सम्यग्दर्शन में उसका नमूना आता है। उस नमूना के द्वारा पूरे तत्त्व की प्रतीत करता है कि पूरा आत्मा अतीन्द्रिय आनन्द और अतीन्द्रिय शान्ति से भरा है। आहाहा! जिसने नमूना (देखा नहीं), उसे पूरी चीज़ की प्रतीति कहाँ से हो? समझ में आया? आहाहा! जिसके पास चैतन्य के समीप जाकर अन्दर में एक क्षण भी बसना, उस शान्ति के आगे दुनिया का वैराग्य है नहीं।

दुनिया का वैराग्य तो भगवान उसे कहते हैं कि शुभराग से भी विरक्त हो। पुण्य (-पुण्य) अधिकार में आता है, समयसार। शुभ और अशुभराग दोनों से विरक्त हो। उसको वैराग्य कहते हैं। आहाहा! शुभ-अशुभ से विरक्त हो, तब वैराग्य होता है, तब चैतन्य के समीप जाता है। तब चैतन्य के समीप भी आया और पर से वैराग्य हुआ, दोनों एकसाथ हुआ। आहाहा! कठिन बात है, भाई! बाकी सब आसान है।

चैतन्य की कोई अपूर्वता लगने से... चैतन्य की कोई अपूर्वता, अपूर्वता-पूर्व में कभी शान्ति और आनन्द अतीन्द्रिय की गन्ध आयी नहीं, उसका नमूना जानने से अपूर्वता लगने से। यह कोई अपूर्व भगवान है। आत्मा अतीन्द्रिय आनन्द के अंश के समक्ष अतीन्द्रिय शान्ति के एक अंश के समक्ष पूरी चीज़ भगवान पूर्ण है, ऐसी अन्दर अनुभव, प्रतीत होती है। आहाहा! **चैतन्य की कोई अपूर्वता लगने से...** कोई अपूर्वता अर्थात् यह आनन्द। आहाहा! अतीन्द्रिय आनन्द का स्वाद, वह वैराग्य। क्योंकि उस स्वाद के आगे दुनिया का कोई भी स्वाद, इन्द्र का इन्द्रासन भी सड़े हुए तिनके जैसा लगता है। उसके

बिना बाहर से सम्यग्दर्शन बिना वैराग्य (आता है), वह कृत्रिम होता है। ऐसा कृत्रिम वैराग्य तो अनन्त बार किया।

यहाँ कहते हैं, **चैतन्य की कोई अपूर्वता लगने से संसार की महिमा छूट जाए,...** आहाहा! चैतन्य का एक भी अंश.. यह प्रभु तो पूरा अंशी है। सम्यग्दर्शन में और सम्यग्ज्ञान में उसका अंश आता है। अंशी का अंश आता है। उस अंश के समक्ष जगत की (महिमा नहीं आती)। **चैतन्य तो कोई अपूर्व वस्तु है; उसकी पहिचान करनी चाहिए,...** आहाहा! यह बात है। १७१ पूरा हुआ न?

'मैं हूँ चैतन्य'। जिसे घर नहीं मिला है, ऐसे मनुष्य को बाहर खड़े-खड़े बाहर की वस्तुएँ, धमाल देखने पर अशान्ति रहती है; परन्तु जिसे घर मिल गया है, उसे घर में रहते हुए बाहर की वस्तुएँ, धमाल देखने पर शान्ति रहती है; उसी प्रकार जिसे चैतन्यघर मिल गया है, दृष्टि प्राप्त हो गई है, उसे उपयोग बाहर जाए, तब भी शान्ति रहती है॥१७४॥

१७४। क्या कहते हैं? आहाहा! **'मैं हूँ चैतन्य'। जिसे घर नहीं मिला है...** दृष्टान्त है। जिसको घर नहीं मिला हो, **ऐसे मनुष्य को बाहर खड़े-खड़े बाहर की वस्तुएँ, धमाल देखने पर अशान्ति रहती है;...** क्या कहा? जिसको घर का घर नहीं है और घर के बाहर खड़ा है। उसका घर तो है नहीं। उसमें जगत की धमाल देखकर, मेरे पर भी ऐसी धमाल आ जाएगी, ऐसी अशान्ति उसको उत्पन्न होती है। **बाहर की वस्तुएँ, धमाल देखने पर अशान्ति रहती है; परन्तु जिसे घर मिल गया है,...** चैतन्यघर जिसको अन्दर से मिल गया, **उसे घर में रहते हुए...** अतीन्द्रिय आनन्द में रहते हुए **बाहर की वस्तुएँ, धमाल देखने पर...** बाहर लड़ाई देखे, किसी का संहार देखे, अपने अन्दर भी कोई लड़ाई का भाव आ जाए। करोड़ों मनुष्य के बीच खड़ा हो और लाखों लोगों की हिंसा भी हो जाए। आहाहा! परन्तु घर में खड़ा है, अन्तर में घर में खड़ा है और बाहर की धमाल देखता है। आहा..! मात्र बाहर में देखता है, उसको धमाल की अशान्ति दिखती है। अन्दर में रहनेवाले को बाहर की धमाल दिखती नहीं। उसकी शान्ति चलायमान होती नहीं। चाहे जो भी धमाल हो। थोड़ी सूक्ष्म बात है। बहिन ने तो अन्दर की बात बाहर थोड़ी-थोड़ी रखी है। आहाहा!

परन्तु जिसे घर मिल गया है, उसे घर में रहते हुए बाहर की वस्तुएँ, धमाल देखने पर शान्ति रहती है;... अपने मकान में रहा है, बाहर की धमाल देखे, दूसरे का घर जलता हुआ देखे तो भी अशान्ति नहीं होती। आहाहा! जिसे अन्दर में घर मिल गया, प्रभु चैतन्य राग से रहित, विकल्प से रहित, निर्विकल्प आनन्द, निर्विकल्प आनन्द का धाम, स्वयं ज्योति सुखधाम, स्वयं ज्योति चैतन्य सहज और सुख का स्थान, सुख का क्षेत्र, उसको देखकर **बाहर की वस्तुएँ, धमाल देखने पर शान्ति रहती है;...** आहाहा! भाषा सादी है। भाषा में मानों कोई... वस्तुस्थिति यह है।

चैतन्य की महिमा आये बिना कोई भी परचीज़ में से उसकी रुचि हटती नहीं। क्योंकि रुचि अनुयायी वीर्य। जिसमें रुचि है, उसमें वीर्य का फैलाव होता है। आहाहा! घूमफिरके बात यह है कि चैतन्य के घर में आ जा, भगवान! तेरा घर यह है। राग, पुण्य, दया, दान का विकल्प तेरा घर नहीं। आहाहा! **उसी प्रकार जिसे चैतन्यघर मिल गया है,...** दृष्टि प्राप्त हो गयी है। आहाहा! अपना अनुभव आनन्द का हो गया है, उसका नाम चौथा गुणस्थान है। अतीन्द्रिय आनन्द का अनुभव, उसका नाम चौथा गुणस्थान समकित है। श्रद्धामात्र करना, वह समकित नहीं। आहाहा! **उसी प्रकार...** धमाल दिखने पर भी शान्ति रहती है, **उसी प्रकार जिसे चैतन्यघर मिल गया है, दृष्टि प्राप्त हो गई है, उसे उपयोग बाहर जाए...** उपयोग बाहर में (जाए और) विकल्प आये, **तब भी शान्ति रहती है।** ध्रुव को पकड़ा है। आहाहा! 'ध्रुव धणी माथे कियो रे, कुण गंजे नर खेट' जिसने ध्रुव ऐसा आत्मा भगवान,... ध्रुव तो पर्याय को भी कहते हैं। समयसार की पहली गाथा। ध्रुव, अचल, अनुपम। वह ध्रुव तो मोक्ष की पर्याय को कहते हैं। पहली गाथा है न? वह ध्रुव नहीं। वह तो ध्रुव क्यों कहा? – मोक्ष में से वापस आता नहीं, सादि-अनन्त एकरूप रहता है, इसलिए उसे ध्रुव कहा, पहली गाथा में। पहला शब्द वह है समयसार का।

वंदित्तु सव्वसिद्धे धुवमचलमणोवमं गदिं पत्ते।
वोच्छामि समयपाहुडमिणमो सुदकेवलीभणिदं॥१॥

क्या कहा? दूसरी गाथा में वह कहा। मैं समयसार कहूँगा, तो समयसार का माल क्या? आहाहा! कहा कि, '**जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो**'। चन्दुभाई! समयसार की दूसरी गाथा। मैं समयसार कहूँगा, परन्तु यह समयसार अर्थात् क्या? आहा..! '**जीवो**

चरित्तदंसणणाणठिदो' जो आत्मा अपनी शान्ति, आनन्द, श्रद्धा, ज्ञान, समकित में जो स्थिर होता है। '**जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो तं हि ससमयं जाण**' उसे तू स्वसमय जान। आहाहा! दूसरी गाथा। और जो '**पोग्गलकम्मपदेसट्ठिदं**' जो राग के कण में रहता है, वह पुद्गल में रहा है। आहाहा! पुण्य के परिणाम में जो रहता है, वह पुद्गल में रहता है। दूसरा पद आया न? '**जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो तं हि ससमयं जाण। पोग्गलकम्मपदेसट्ठिदं**' पुद्गल के प्रदेश में परसमय रहा है। परमाणु में रहा है? आहाहा! वह पुद्गल का ही प्रदेश है। दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा आदि का शुभभाव, यह सब पुद्गल का ही प्रदेश है, पुद्गल का ही भाग है। आहाहा! यह दूसरी गाथा। दूसरी गाथा का सार।

'**जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो तं हि ससमयं जाण**' उसे तू स्वसमय आत्मा जान। आत्मा अपना स्वभाव दर्शन, ज्ञान, शान्ति में रहता है, स्थिर होता है, जमता है, अनुभव करता है, उसको स्वसमय जान, उसको आत्मा जान। स्वसमय अर्थात् उसको आत्मा जान। और उसके सिवा रागादि विकल्प में है, वह आत्मा नहीं। वह तो पुद्गल के प्रदेश में स्थित है। आहाहा! गजब है! रागादि कण में रहनेवाला, शुभ क्रियाकाण्ड में रहनेवाला पुद्गल में रहा है। पुद्गल का प्रदेश है, भगवान आत्मा का वह प्रदेश-क्षेत्र या भाव नहीं है।

यहाँ वह कहा, १७४ गाथा है न? **जिसे चैतन्यघर मिल गया है, दृष्टि प्राप्त हो गई है, उसे उपयोग बाहर जाए...** आहाहा! चौथे, पाँचवें गुणस्थान में तो रौद्रध्यान भी होता है। फिर भी दृष्टि ध्रुव पर पड़ी है, समकित (जाता) नहीं। रौद्रध्यान होता है। आहाहा! छट्ठे गुणस्थान में रौद्रध्यान नहीं है, वहाँ मात्र आर्तध्यान है। आहाहा! आर्तध्यान है, फिर भी छट्ठा गुणस्थान है। यहाँ रौद्रध्यान है, फिर भी चौथा और पाँचवाँ गुणस्थान है। वह दशा पलट गई है, अन्दर में भिन्न हो गया है। आहा..! एक में आनन्दकन्द का ध्यान है, एक में राग का (ध्यान है)। दोनों भिन्न हो गये हैं, जुदा हो गये हैं। वह कहा।

उसे उपयोग बाहर जाए... धर्मी का उपयोग राग में, विकल्प में, विषय में, वासना में, भोग में, लड़ाई में भी जाए, फिर भी **शान्ति रहती है।** अन्तर में आनन्द का ध्रुव का ध्यान है। ध्रुव का ध्येय, ध्रुव का ध्येय का ध्यान, ध्रुव का ध्येय का ध्यान हटता नहीं। खसता नहीं को क्या कहते हैं? हटता नहीं। आहाहा! ऐसी बात है। १७४ हुआ न? अब, १८३।

> **चैतन्यदेव रमणीय है, उसे पहिचान। बाहर रमणीयता नहीं है। शाश्वत आत्मा रमणीय है, उसे ग्रहण कर। क्रियाकाण्ड के आडम्बर, विविध विकल्परूप कोलाहल, उस पर से दृष्टि हटा ले; आत्मा आडम्बर रहित, निर्विकल्प है, वहाँ दृष्टि लगा; चैतन्यरमणता रहित विकल्पों के कोलाहल में तुझे थकान लगेगी, विश्राम नहीं मिलेगा; तेरा विश्रामगृह आत्मा है; उसमें जा तो तुझे थकान नहीं लगेगी, शान्ति प्राप्त होगी॥१८३॥**

१८३। **चैतन्यदेव...** आहाहा! **चैतन्यदेव रमणीय है,...** उसको चैतन्यदेव कहा। दिव्य शक्ति का भण्डार, दिव्य शक्ति का सागर, उसको देव कहा। कलश में भी आता है। अमृतचन्द्राचार्य। समयसार का कलश आता है न? कलश में भी आता है कि देव है, आत्मा देव है। आहाहा! जिसकी दिव्यता के समक्ष इन्द्र के इन्द्रासन भी सड़े हुए बिल्ली के मुर्दे जैसा लगता है। आहाहा! आत्मा के आनन्द के आगे, भले चौथे गुणस्थान में हो, परन्तु आत्मा के आनन्द के आगे इन्द्र का इन्द्रासन भी सड़ा हुआ कुत्ता अथवा सड़ी हुई बिल्ली जैसा लगता है। आहाहा! रस उड़ गया। रस आत्मा में लग गया, इसलिए यहाँ से रस छूट गया। जिसको पर में रस लगा है, उसको स्वरस है नहीं। आहाहा! कौन-सा आया है? १८३।

चैतन्यदेव रमणीय है, उसे पहिचान। भगवान अन्दर रमणीय है। आहाहा! कोई अलौकिक रमणता उसमें भरी है। चमड़े के अन्दर भिन्न है, ऐसा देखकर, अल्प है – ऐसा न मान। चमड़ी और हड्डी के अन्दर दिखता है, इसलिए उसे अल्प मत मान। **चैतन्यदेव रमणीय है, उसे पहिचान। बाहर रमणीयता नहीं है।** आहाहा! सर्वार्थसिद्ध का वैभव या चक्रवर्ती का वैभव, उसमें रमणीयता नहीं है। यह तो घर की बात है। जिसे अन्दर की रमणीयता भासित हुई, उसे पूरी दुनिया की रमणीयता छूट गई। आहाहा!

शाश्वत आत्मा रमणीय है,... भगवान नित्यानन्द, वही रमणीय है। आहाहा! रमने योग्य रमणीक और शोभनीक हो तो भगवान नित्य आत्मा है। आहाहा! **शाश्वत आत्मा रमणीय है, उसे ग्रहण कर।** ग्रहण कर अर्थात् उसका अनुभव कर। उसके बिना सब व्यर्थ है। आहाहा! भगवान आत्मा अतीन्द्रिय आनन्द, उसे ग्रहण कर, पकड़। तेरी पकड़

अनादि से राग में हो गयी है, वह पकड़ छोड़ दे। अन्दर भगवान आत्मा रमणीय है, उसे पकड़ ले। भाषा तो सादी है, भाव बहुत कठिन है, भाई!

क्रियाकाण्ड के आडम्बर,... आहाहा! बाह्य क्रियाकाण्ड के आडम्बर में अपने को रोक लिया। आहाहा! **विविध विकल्परूप कोलाहल,...** यह छोड़ा, यह लिया, यह किया, वह सब विकल्प की जाल है, राग की जाल है। राग की जाल, कोलाहल! **उस पर से दृष्टि हटा ले;...** पर की ओर का कोलाहल जो विकल्प है, उससे हट जा। भाषा तो क्या आये? हटा ले, भाषा से काम (होता है)? आहाहा! दृष्टि पलट जाती है। जो दृष्टि राग पर है, जो दृष्टि पर्याय पर है, वह दृष्टि द्रव्य पर पलट दे। क्योंकि पर्याय पलटती तो है, पलटने का उसका स्वभाव तो है ही, परन्तु स्व ध्येय पर कभी पलटी नहीं। आहाहा! राग के लक्ष्य से, द्वेष के लक्ष्य से पलटकर अनादि से पर्याय में रहा। चाहे तो दया, दान, व्रत (करके) नौवीं ग्रैवेयक मुनि गया। व्रत, पच्चखाण निरतिचार पाले, हाँ! फिर भी मिथ्यादृष्टि है। आहाहा! आत्मा के आनन्द का रस आये बिना **क्रियाकाण्ड के आडम्बर, विविध विकल्परूप कोलाहल, उस पर से दृष्टि हटा ले;...** आहाहा! यह तो तत्त्व की बात है।

आत्मा आडम्बर रहित,... है। भगवान आत्मा निर्विकल्प आनन्द (स्वरूप) है। जिसमें विकल्प मात्र नहीं है। निर्विकल्प अखण्ड तत्त्व है अन्दर। विकल्प उठना उसके स्वभाव में है ही नहीं। आहाहा! विकल्प से हटकर, **आत्मा आडम्बर रहित, निर्विकल्प है,...** आहाहा! **वहाँ दृष्टि लगा;...** वहाँ दृष्टि लगा दे, प्रभु! आहा..!

स्वसमय उसी को कहा। फिर तो विस्तार किया। दूसरी गाथा में कहा कि '**जीवो**' '**जीवो**'। इसलिए ४७ शक्ति में पहली जीवत्वशक्ति ली है। ४७ शक्ति है न? पहली जीवत्व ली है। वह इसमें से लिया है। '**जीवो**' में से लिया है। दूसरी गाथा का पहला शब्द। जीवत्वशक्ति से विराजमान जीव है। जीवत्वशक्ति में अनन्त आनन्द, अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त वीर्य... आहाहा! वह जिसका जीवन है। उस जीवन को धरनेवाला वह जीव है। आहाहा! जीवत्वशक्ति है न? ४७ में पहली शक्ति। वह यहाँ से निकाली है। '**जीवो चरित्तदंसणणाणठिदो**' पहला चरित्र शब्द लिया है। मुनि है न? मुनि ने बनाया है न! अपना शुद्ध चैतन्य निर्विकल्पस्वरूप, अखण्डानन्द, विकल्प का संग जिसको है नहीं, आहाहा! ऐसा करूँ और ऐसा न करूँ, ऐसा छोड़ूँ और ऐसा न छोड़ूँ, वह सब विकल्प की

जाल है। राग की जाल है। राग की जाल में **तुझे थकान लगेगी, विश्राम नहीं मिलेगा;...** आहाहा! वहाँ विश्राम-शान्ति नहीं मिलेगी। आहाहा!

तेरा विश्रामगृह आत्मा है;... तेरा विश्रामगृह चौरासी की थकान दूर करने का... आहाहा! विश्रामगृह आत्मा है। जहाँ चौरासी के अवतार छूट जाते हैं। सर्वार्थसिद्धि के देव का भी अवतार छूट जाता है। वह तेरा विश्रामगृह है। आहाहा! जब तक विश्राम नहीं मिलेगा, **तेरा विश्रामगृह आत्मा है;...** उसमें आ जा। **उसमें जा तो तुझे थकान नहीं लगेगी,...** राग की जाल में तुझे थकान लगेगी, उलझन में आ जाएगा, दुःख होगा, आकुलता की जाल में रुक जाएगा। जैसे मकड़ी... आहाहा! अपनी लार निकालकर उसी में रुकती है। मकड़ी अपने मुख में से लार निकालकर वहीं अटकती है। आहाहा! वैसे अज्ञानभाव में विकार की लार निकालकर उसमें तू घुस गया है। आहाहा! करोलियो कहते हैं न? हमारे में करोलियो कहते हैं।

एक बार वहाँ कहा था। मनुष्य हुआ। मनुष्य है, उसके दो पैर है। स्त्री हुई तो चार पैर हुए। पशु हुआ, पशु। चोपाया दूसरी भाषा है न। दुर्घटना शब्द लिखा है न? दुर्घटना। स्त्री के साथ शादी करना दुर्घटना है। त्रिलोकनाथ महावीर परमात्मा ब्रह्मचारी रहे। क्योंकि स्त्री दुर्घटना है। उसके बाद सब दुर्घटना ही होगी। आहाहा! यहाँ कहते हैं, विश्रामगृह एक (आत्मा) है। **उसमें जा तो तुझे थकान नहीं लगेगी,...** आहाहा! शान्ति प्राप्त होगी। शान्ति का सागर है। शान्ति अर्थात् शास्त्र भाषा से अकषाय भाव है। अकषाय भाव से पूर्ण भरा है। पूर्ण शान्ति.. शान्ति.. शान्ति.. जिसके शान्ति के एक अंश के समक्ष.. आहाहा! सर्वार्थसिद्ध का देव भी गिनती में नहीं आता। वह भी समकिती एकावतारी है। यहाँ जो शान्ति का अंश आया, उसमें चौथे से पाँचवें गुणस्थान में जाए.. आहाहा! सर्वार्थसिद्धि में जो शान्ति है, उससे भी विशेष अधिक शान्ति है। पंचम गुणस्थान प्रतिमाधारी, बाह्य में प्रतिमा है, वह तो विकल्प है, परन्तु अन्दर आनन्द है, वह वस्तु है। आनन्द आदि हो तो विकल्प को व्यवहार कहने में आता है। नहीं तो व्यवहार भी नहीं है। आहाहा!

आनन्द के घर में वह रहता है। आहा..! उसमें तुझे शान्ति लगेगी। तेरा घर शान्ति का सागर है। कैसे बैठे? भाई! वह कोई विकल्प से बैठे या सुनकर बैठे, वह कोई चीज़ नहीं है। सुनकर बैठे या धारणा में आया, वह कोई चीज़ नहीं है। अपनी चीज़ आनन्दकन्द

नाथ, उसका स्पर्श करने से जो शान्ति मिलेगी, ऐसी शान्ति तीन लोक में दूसरे किसी स्थान में नहीं है। आहाहा! उसमें पंचम गुणस्थानवाले को सर्वार्थसिद्ध की शान्ति है, उससे विशेष शान्ति मिलेगी। सर्वार्थसिद्ध का देव एकावतारी, एक भव में मोक्ष जानेवाला है। उसकी जो चौथे गुणस्थान की (शान्ति) है, (उससे) पंचम गुणस्थान का आनन्द अनुभव में आया है, तो उसका आनन्द तो उससे भी बढ़ गया। सर्वार्थसिद्ध के देव से आनन्द बढ़ गया। आहाहा! तब उसे प्रतिमाधारी कहने में आता है। आहाहा! इसलिए वहाँ विश्राम लिया।

शान्ति प्राप्त होगी। शान्ति अन्दर में है। १८३ (पूरा हुआ)।

मुमुक्षु :- आपने तो करणानुयोग का व्याख्यान भी कर दिया।

पूज्य गुरुदेवश्री :- वह तो नाम दिया। १८३ हुआ न? अब, १८५।

मुनिराज कहते हैं:—चैतन्यपदार्थ पूर्णता से भरा है। उसके अन्दर जाना और आत्मसम्पदा की प्राप्ति करना, वही हमारा विषय है। चैतन्य में स्थिर होकर अपूर्वता की प्राप्ति नहीं की, अवर्णनीय समाधि प्राप्त नहीं की, तो हमारा जो विषय है, वह हमने प्रगट नहीं किया। बाहर में उपयोग आता है, तब द्रव्य-गुण-पर्याय के विचारों में रुकना होता है, किन्तु वास्तव में वह हमारा विषय नहीं है। आत्मा में नवीनताओं का भण्डार है। भेदज्ञान के अभ्यास द्वारा यदि वह नवीनता—अपूर्वता प्रगट नहीं की, तो मुनिपने में जो करना था, वह हमने नहीं किया॥१८५॥

१८५। **मुनिराज कहते हैं:—चैतन्यपदार्थ पूर्णता से भरा है।** महाव्रतधारी सत्य बोलनेवाले। आहाहा! वे कहते हैं, **चैतन्यपदार्थ पूर्णता से भरा है।** शान्ति से, आनन्द से, वीतरागता से वीतरागता से... वीतरागता से पूर्ण भरा है। जिसमें राग की गन्ध नहीं। आहाहा! ऐसा आत्मा कैसे माने? वीतराग की मूर्ति पूरी। पूरी दुनिया में फेरफार हो जाए, लेकिन उसकी वीतरागमूर्ति में फेरफार नहीं होता। ऐसा वीतरागमूर्ति आत्मा है। **चैतन्यपदार्थ पूर्णता से भरा है। उसके अन्दर जाना...** आहाहा! उसके अन्दर जाना। राग से हटकर... प्रभु! शब्द तो बहुत थोड़े हैं। राग-विकल्प से हटकर निर्विकल्प आनन्द में जाना, वह चीज़ है। करना यह है। कल कहा था न? बारह अंग विकल्प है। बारह अंग है विकल्प,

बारह अंग विकल्प है; उसमें अनुभूति कहने में आयी है। आत्मा का आनन्द का अनुभव कहने में आया है। बारह अंग में सार यह कहा है। आहाहा! भले वह है विकल्प, परन्तु उसमें कहा यह है। आत्मा की अनुभूति–आनन्द। आनन्द का अनुभव करो। प्रभु! तेरे घर में आनन्द भरा है। आहाहा!

अपने सिवा जगत की कोई भी चीज़, थोड़ी भी ठीक है, ऐसा लगे, सुख लगे, मजा लगे तब तक मिथ्यात्व है। आहाहा! अपने आत्मा के सिवा कहीं भी सुख की गन्ध लगे, सुख का परम्परा कारण भी लगे,... आहाहा! राग करेंगे तो परम्परा से वीतरागता मिलेगी, वह भी... आहाहा! दुर्गन्ध है। आत्मा की गन्ध नहीं। आहाहा! सूक्ष्म बात है, भाई!

मुनिराज कहते हैं:—चैतन्यपदार्थ पूर्णता से भरा है। अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्द, अनन्त वीर्य, अनन्त स्वच्छता, अनन्त जीवत्व, चिति, दृशि, ज्ञान, सुख, वीर्य, प्रभुता, विभुता, सर्वदर्शी, सर्वज्ञ, स्वच्छता—ऐसी अनन्त शक्ति से परिपूर्ण भरा है। आहाहा! **उसके अन्दर जाना...** उसके अन्दर जाना। आहाहा! यह सार है। क्या करना? अन्दर जाना, वह करना है। वह कोई बाह्य क्रियाकाण्ड का सेवन करने से अन्दर जाएगा, (ऐसा) त्रिकाल में नहीं है। आहाहा! **उसके अन्दर जाना और आत्मसम्पदा की प्राप्ति करना,...** मुनिराज ऐसा कहते हैं कि **आत्मसम्पदा की प्राप्ति करना, वही हमारा विषय है।** नियमसार में है, कलश है। नियमसार में कलश है। हमारा विषय अतीन्द्रिय आनन्द का अनुभव, वह विषय हम नहीं करते हैं, ऐसा कहकर बोध दिया है। कलश है, नियमसार में। हमारा विषय, मुनिराज का विषय अतीन्द्रिय आनन्द का घर, यह विषय है। आहाहा!

यहाँ वह कहते हैं, **चैतन्यपदार्थ पूर्णता से भरा है। उसके अन्दर जाना और आत्मसम्पदा की प्राप्ति करना, वही हमारा विषय है।** मुनिराज का यह विषय है। आहाहा! सच्चे मुनि इसको कहते हैं। क्रियाकाण्ड करे, वह मुनि नहीं है। आहाहा! **आत्मसम्पदा की प्राप्ति करना, वही हमारा विषय है।** आहाहा! क्या कहा? हमारा ध्येय तो अकेले आनन्दकन्द के ऊपर है। बाहर में प्रवृत्ति–उपयोग थोड़ा सा जाता है, परन्तु उपयोग आता है, उसमें दुःख लगता है। आहाहा! उपदेश का, लिखने का विकल्प दुःख है। शास्त्र की टीका लिखना, वह विकल्प दुःख है। आहाहा! हमारा विषय वह नहीं है। है? **आत्मसम्पदा की प्राप्ति करना, वही हमारा विषय है।** आहाहा! लिखना या उपदेश देना, हमारा विषय नहीं है। आ जाओ

तो आ जाओ, उसके कारण से हो जाओ, हमारा विषय नहीं है। हम उसमें है नहीं। आहाहा!

यहाँ तो **आत्मसम्पदा की प्राप्ति करना, वही हमारा विषय है।** आहाहा! पंच महाव्रत पालना, अट्ठाईस मूलगुण पालना हमारा विषय है, ऐसा नहीं लिया। आहाहा! नियमसार में यह कलश है। बहिन ने लिखा है, वह उसमें से लिखा है। पढ़ते होंगे तो उसमें से यह बोले हैं। पद्मप्रभमलधारिदेव मुनि कहते हैं, हमारा विषय यह है, वहाँ हम जाते नहीं। ऐसा कहकर लोगों को आगे बढ़ाते हैं। हमारा विषय तो एक ही है। चैतन्यस्वरूप आनन्दकन्द में रहना, बस। आहाहा! पंच महाव्रत पालना या वह करना (हमारा विषय नहीं है)। कलश है। पद्मप्रभमलधारिदेव, नियमसार की टीका करनेवाले, उनका कलश है। आहाहा! हमारा विषय जो है, हमारा जो ध्येय है, वहाँ हम जाते नहीं और बाहर में भटकते हैं, अरे..रे..! यह विषय नहीं। ऐसा कहकर अल्प कोई विकल्प आया, उसका खेद किया है। विकल्प आया उसका खेद (किया है)। विकल्प क्या? हमारी चीज़ में विकल्प तीन काल में नहीं है। हमारा विषय तो यह है। कहा न? आहाहा! क्या?

चैतन्य में स्थिर होकर अपूर्वता की प्राप्ति नहीं की, अवर्णनीय समाधि प्राप्त नहीं की,... आहाहा! जब तक यह नहीं किया, तब तक मुनिपना नहीं है। चैतन्य में स्थिर होकर अपूर्वता की प्राप्ति नहीं की। अपूर्व और अवर्णनीय समाधि-कथन कर सके नहीं ऐसी समाधि-आनन्द, ऐसा प्राप्त नहीं किया **तो हमारा जो विषय है,...** आहाहा! मुनिराज कहते हैं। हमारा विषय है। आहाहा! पंच महाव्रत (पालना), वस्त्र छोड़ना, नग्न होना, वह कोई मुनि का विषय है ही नहीं। आहाहा! गजब बात है। **हमारा जो विषय है, वह हमने प्रगट नहीं किया।** विचार करते हैं। आहाहा!

बाहर में उपयोग आता है, तब द्रव्य-गुण-पर्याय के विचारों में रुकना होता है,... विकल्प आता है तो द्रव्य-गुण-पर्याय में रुकता है। बाहर तो नहीं, परन्तु अपने द्रव्य-गुण-पर्याय तीन भेद, उसमें रुकता है, वह भी राग है। वह गाथा है, नियमसार में गाथा है, मूल पाठ है। द्रव्य-गुण-पर्याय अपने में तीन के विचार करने में रुकना, वह पराधीन, परवश, अनावश्यक है। क्या कहा? जो आत्मा में द्रव्य, गुण और पर्याय ऐसा तीन का विचार करते हैं, वह अनावश्यक है, वह आवश्यक में नहीं है। आवश्यक अधिकार में है, नियमसार में। विशेष आयेगा... (**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)